|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

॥ गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ॥

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 5: कर्मसंन्यासयोग

1/2 (श्लोक 1-10), रविवार, 29 दिसंबर 2024

विवेचक: गीता प्रवीण ज्योति जी शुक्ला

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/weXJZrK0wIE

कर्म योग की श्रेष्ठता

ईश्वर की असीम अनुकम्पा एवम् गुरुदेव के आशीर्वाद से आज के विवेचन सत्र (बालकों-बालिकाओं हेतु) का शुभारम्भ सङ्कीर्तन, भगवान श्रीकृष्ण की प्रार्थना एवम् दीपप्रज्वलन से हुआ।।तत्पश्चात् श्रीमद्भगवद्गीता जी के पञ्चम अध्याय (कर्मयोग) का विवेचन चिन्तन प्रारम्भ हुआ। इस विवेचन सत्र में श्लोक क्रमाङ्क एक से विवेचन प्रारम्भ होता है।

सम्वादात्मक सत्र होने के नाते गीता जिज्ञासु बालक-बालिकाओं से समय-समय पर प्रश्न भी पूछे गए।

अर्जुन पहले अध्याय में विषाद में हैं, घबराएँ हुए भी हैं। भीष्म, द्रोणाचार्य जैसे महारथी, उनके बड़े तथा आदरणीय हैं, जिनके प्रति अर्जुन के मन में सम्मान का भाव है, उनसे वो कैसे युद्ध कर सकते हैं?

बालकों की उपस्थिति में बालकों के लिए विशेष होने के कारण, बीच-बीच में उनको संबोधित भी किया है, बच्चों को समझाने के लिए उनके स्वभाव और क्रिया को उदाहरण रूप में प्रस्तुत भी किया है।
जैसे हम सभी अपने से बड़ो से कैसे युद्ध करे, ये बोलते भी हैं। श्रीअर्जुन जब युद्ध नहीं करूँगा, बोलते हैं, तो श्रीभगवान उपदेश देने लगते हैं, क्या सही है, क्या ग़लत है, क्या करने से पाप नहीं लगेगा?

तीसरे अध्याय में कर्मयोग की व्याख्या करते हुए कहते है: कि कैसे कर्म करना है, कैसे कर्म नहीं करना है।

उसके और ऊपर के स्तर की बात चौथे अध्याय में करते हैं। अर्जुन विषाद से ग्रसित है, भ्रमित भी हैं। इसी कारण पाँचवें अध्याय का उदय होता है। तीसरे अध्याय में श्रीभगवान एक बात कहते हैं, चौथे अध्याय में अलग बात कहते हैं, इससे अर्जुन और भ्रमित हो जाते हैं। श्रीभगवान क्या कह रहें, वे समझ नहीं पाते। अर्जुन के बार-बार भ्रमित होने से ही पाँचवें अध्याय का उदय हुआ है। अर्जुन पूछते हैं, सही क्या है?

सत्र को रुचिकर बनाने के लिए बच्चों से पूछे गए कुछ प्रश्न-
प्रश्न- पहले अध्याय का क्या नाम है?
उत्तर- साध्वी ने सही उत्तर दिया, अर्जुनविषादयोग।

प्रश्न- तीसरे अध्याय का क्या नाम है?
उत्तर- नित्या ने सही उत्तर दिया, कर्मयोग।

प्रश्न- चौथे अध्याय का क्या नाम है?
उत्तर- सम्बित ने बताया, ज्ञानकर्मसंन्यासयोग। बिल्कुल सही बताया।

अर्जुन भ्रमित हो जाते हैं, कि कर्मयोग या कर्मसंन्यास में से कौन सा श्रेष्ठ है।
कर्मयोग, कर्मसंन्यास की परिभाषा आसान शब्दों में ये है, ये श्रीभगवान पहले श्लोक में बताते हैं।

5.1

अर्जुन उवाच सन्न्यासं(ङ्) कर्मणां(ङ्) कृष्ण, पुनर्योगं(ञ्) च शंससि। यच्छ्रेय एतयोरेकं(न्), तन्मे ब्रूहि सुनिश्चितम्॥5.1॥

अर्जुन बोले - हे कृष्ण ! (आप) कर्मों का स्वरूप से त्याग करने की और फिर कर्मयोग की प्रशंसा करते हैं। (अतः) इन दोनों साधनों में जो एक निश्चित रूप से कल्याण कारक हो ,उसको मेरे लिये कहिये।

विवेचन- अर्जुन कह रहें हैं, कर्मयोग और कर्मसंन्यासयोग में, कौन सा श्रेष्ठ है? अर्जुन युद्ध तो करना चाहते हैं, पर पाप भी न लगे ऐसा चाहते हैं। पाप से हम सभी डरते हैं, पुण्यों को बढ़ाना ही चाहते हैं। अर्जुन भी वैसा ही चाह रहे हैं कि उनके खाते में पाप नहीं पुण्य ही बढ़ें। इसीलिए अर्जुन पूछ रहे हैं कि इन दोनों में से श्रेष्ठ कौन सा है?

हम सभी को, श्रीभगवान को जो कर्म पसन्द हैं, वही करने चाहिए। हम जानते हुए भी कि जो बोल रहे हैं, वो सही नहीं है, फिर भी झूठ बोल देते हैं। झूठ बोलना श्रीभगवान को पसन्द नहीं आता है। श्रीभगवान ने ये जीवन दिया है, तो अच्छे-अच्छे कर्म करें, और वापस श्रीभगवान के पास ही चले जाएँ। सन्त महात्मा श्रीभगवान के पसन्द के सत् कर्म ही करते हैं। उनके पास कुछ होता भी नहीं है, और कुछ पाने की आकाङ्क्षा भी नहीं होती है। हमें तो एक वीडियो गेम की इच्छा भी हो जाती है, और नहीं मिलने पर क्रोध से भर जाते हैं। गीताजी पढ़ने वाले बच्चों में ये दुर्गुण नहीं होता है।

कर्मसंन्यासयोग का मतलब होता है, कर्म करके फल की इच्छा नहीं करना।

कर्म तो सभी को करने ही होते हैं। तुरन्त ही संन्यासी बन जाय, कोई इच्छा नहीं रखें, ये इतना आसान भी नहीं है।

उदाहरण- जैसे एक बच्चा पढ़ना शुरू करता है, तो प्रारम्भ में ही ऊँची कक्षाओं में प्रवेश नहीं पा जाता। उसे सर्वप्रथम छठीं में जाने के लिए उसके नीचे को कक्षाओं में अध्ययन करके उत्तीर्ण होना होगा तभी, छठीं कक्षा में प्रवेश पा सकेगा। हम सब साधारण मनुष्य है। कर्म योगी पहले बनेगें। श्रीभगवान की पसन्द के कार्य करेगें तो धीरे-धीरे, संतों की भावना भी आने लगेगी। कर्मयोग और कर्मसंन्यासयोग में कौन सा श्रेष्ठ है, ये अगले श्लोक में श्रीभगवान बताते हैं।

5.2

श्रीभगवानुवाच सन्न्यासः(ख्) कर्मयोगश्च, निःश्रेयसकरावुभौ।
तयोस्तु कर्मसन्न्यासात्, कर्मयोगो विशिष्यते॥5.2॥

श्रीभगवान् बोले - संन्यास (सांख्ययोग) और कर्मयोग दोनों ही कल्याण करने वाले हैं। परन्तु उन दोनों में (भी) कर्मसंन्यास-(सांख्ययोग) से कर्मयोग श्रेष्ठ है।

विवेचन- श्रीभगवान बताते हैं, कर्मयोग और साङ्ख्ययोग दोनों ही कल्याणकारी हैं, उनमें कर्मयोग अधिक श्रेष्ठ है। सीधे

साङ्ख्य योगी, सन्त नहीं बन सकते। वहाँ तक पहुँचने के लिए पहले कर्म योगी बनना पड़ेगा। कर्म योगी होने के लिए सच बोलना, पूजा करना, तिलक लगाना, सहायता करना, माता पिता को प्रणाम करना आदि। अच्छे काम करने आवश्यक हैं। छोटे छोटे कामों से शुरुवात करेंगे, तो धीरे-धीरे हमारा लगाव गलत काम से कम हो जाएगा। सन्त बनने के लिए कर्म योगी बनना पड़ता है। कक्षा दसवीं में जाना है, तो नीचे की कक्षाओं में उत्तीर्ण होना ही होगा। उसी प्रकार कर्मयोग में दीक्षित होने के पश्चात ही हम सब साड्ख्य योगी बनने का प्रयास कर सकते हैं।

5.3

ज्ञेयः(स्) स नित्यसन्न्यासी, यो न द्वेष्टि न काङ्क्षति।
निर्द्वन्द्वो हि महाबाहो, सुखं(म्) बन्धात्प्रमुच्यते॥5.3॥

हे महाबाहो ! जो मनुष्य न (किसी से) द्वेष करता है (और) न (किसी की) आकांक्षा करता है; वह (कर्मयोगी) सदा संन्यासी समझने योग्य है; क्योंकि द्वन्द्वों से रहित (मनुष्य) सुखपूर्वक संसार-बन्धन से मुक्त हो जाता है।

विवेचन- इस श्लोक में श्रीभगवान कर्म योग का महत्व बतायेगें। अच्छे कर्म तो हम सभी करते हैं। श्रीभगवान कह रहें हैं कि किसी से द्वेष नहीं करना चाहिए। किसी भी तरह की कोई आकाङ्क्षा अर्थात् ये चाहिए, ये भी चाहिए, इसका भी त्याग कर देना चाहिए। ऐसा बारहवें अध्याय के सत्रहवें श्लोक में भी भगवान ने बताया है।

यो न हृष्यति न द्वेष्टि, न शोचति न काङ्क्षति।

शुभाशुभपरित्यागी, भक्तिमान्यः(स्) स मे प्रियः॥१२.१७॥

जो द्वेष नहीं करता, आकांक्षा नहीं करता, दूसरे के लिए बुरा भी नहीं सोचता, उसको संन्यासी कह सकते हैं।

यहाँ कह रहे हैं, द्वेष नहीं करने वाला, आकाङ्क्षा नहीं रखने वाला कर्म योगी, साड्•ख्य योगी के समान ही होता है। द्वन्द्वों से मुक्त, लाभ हानि से परे, सुख-दुःख में समभाव वालों का भगवान से सम्बन्ध जुड़ जाता है।
बारहवें अध्याय के सोलहवें, सत्रहवें श्लोक में ये ही बात दोहरायी गयी है।

अनपेक्षः(श्) शुचिर्दक्ष, उदासीनो गतव्यथः।

सर्वारम्भपरित्यागी, यो मद्भक्तः(स्) स मे प्रियः॥१२.१६॥

कहानी- एक बाबा भारती थे। उनके पास एक घोड़ा, अत्यन्त सुन्दर, अच्छे क़द काठी का सफ़ेद चमकदार था। उसका नाम था सुल्तान। बाबा भारती उस घोड़े से बहुत प्यार करते थे। संन्यासी होते हुए भी, उस घोड़े से बाबा भारती को बहुत लगाव था। सब कुछ त्याग दिया, पर घोड़े को नहीं छोड़ पाये। उसके लिए एक अस्तबल भी रहने को बना दिया। उस घोड़े की प्रशंसा उस क्षेत्र में चारों ओर होती थी। उसी गाँव में खड़गसिंह नाम का डाकू भी रहता था। एक किवदन्ती भी है।

खड़क सिंह के खड़कने से खड़कती हैं खिड़कियां,
खिड़कियों के खड़कने से खड़कता है खड़क सिंह।

जो भी चीज या वस्तु खड़गसिंह को पसन्द आती थी, वो ले लेता था। बाबा भारती का घोड़ा विशेष है, ये बात उसे पता चली। वो बाबा भारती के पास आता है, बाबा भारती उस घोड़े की बहुत प्रसंशा करते हैं। खड़गसिंह सैर करना चाहता है। सैर करने के पश्चात खड़गसिंह घोड़े पर मोहित हो जाता है। वो बाबा भारती से वो घोड़ा माँगता है, पर बाबा भारती देने से मना कर देते हैं। इस पर खङ्गसिंह बोल कर जाता है कि वो घोड़ा, उनसे ले लेगा। बाबा भारती ये सुन कर चिन्तित हो जाते हैं। रात रात को उस घोड़े को सम्भालते रहते। कुछ महीने बीत गये, कुछ भी नहीं हुआ तो बाबा भारती की चिन्ता कम हो गयी।

बाबा भारती एक दिन घोड़े पर घूमने निकले, रास्ते में एक अत्यन्त निर्धन अस्वस्थ व्यक्ति दर्द से कराहता हुआ मिला। उस

व्यक्ति ने बाबा भारती से सहायता के लिए कहा कि आगे के गाँव तक उसे घोड़े पर चढ़ा कर पहुँचा दे। बाबा भारती ने एक बार न भी कह दिया। दयनीय व्यक्ति के पीड़ा से दूसरी बार कहने पर उन्होंने उसे घोड़े पर बैठा लिया। छद्म वेष में वो अस्वस्थ, निर्बल व्यक्ति डाकू खड़गसिंह ही था, बाबा को घोड़े पर नहीं बैठने देकर वो घोड़ा लेकर आगे चला गया। बाबा ने पीछे से आवाज़ देकर, उसको रुकने के लिए कहा। खड़गसिंह रुक गया। बाबा भारती उसको बोलते हैं, एक बात मानोगे। डाकू बोलता है, घोड़ा वापस देने की बात को छोड़ कर कोई भी बात मानूँगा। बाबा बोलते हैं, आज जो हुआ, वो किसी को भी नहीं बताना। कारण कि भविष्य में कोई भी किसी निर्धन की मदद नहीं करेगा। लोक कल्याण की बात, बाबा विचार करके बोल रहें हैं। खड्ङसिंह सोचता है, बाबा उसके प्रति द्वेष का भाव नहीं रख रहे हैं। वो चिन्ता कर रहे हैं कि लोग एक दूसरे की मदद नहीं करेगें। खड्ङसिंह का हृदय प्रवर्तित हो जाता है। रात को खड्ङसिंह घोड़ा वापस लाकर अस्तबल में बाँध देता है।

रात को घोड़े की हिनहिनाहट का स्वर सुनकर बाबा भारती अस्तबल में जाकर देखते हैं, तो घोड़े को वहाँ पाकर, बहुत रोते हैं।

इस कहानी से शिक्षा मिलती है कि बाबा को घोड़े से बहुत प्रेम होने के बाद भी घोड़े के चले जाने पर भी द्वेष नहीं करते हुए, समाज के बारे में ही सोचते हैं, क्योंकि वे संन्यासी हैं, राग-द्वेष से ऊपर उठे हुए हैं।

5.4

साङ्ख्ययोगौ पृथग्बालाः(फ्), प्रवदन्ति न पण्डिताः।
एकमप्यास्थितः(स्) सम्यग्, उभयोर्विन्दते फलम्॥5.4॥

नासमझ लोग सांख्ययोग और कर्मयोग को अलग-अलग (फल वाले) कहते हैं, न कि पण्डितजन; (क्योंकि) (इन दोनों में से) एक साधन में भी अच्छी तरह से (स्थित) मनुष्य दोनों के फलरूप (परमात्मा को) प्राप्त कर लेता है।

विवेचन- इस श्लोक में जो बाला शब्द आया है, वो अज्ञानी के लिए आया है। जो अज्ञानी होते हैं, जो बाल बुद्धि हैं, वो कर्म योग और
साङ्ख्ययोग को अलग-अलग मानते है। दोनों से ही भगवान की प्राप्ति होती है। दोनों योगों से एक परिणाम मिलने वाला है।

उदाहरण- नदी के किनारे खड़े हैं। उस पार जाना हैं तथा पार जाने हेतु दो भिन्न-भिन्न मार्ग हैं। नाव से जा सकते हैं या तैर कर। उसी तरह श्रीभगवान की प्राप्ति के भी यह दो साधन है, कर्म योग और साङ्ख्य योग, चूँकि दोनों ही भगवद् प्राप्ति के मार्ग हैं अत: दोनों ही मार्ग समस्त जीवों, जो भगवद् प्राप्ति मार्ग की ओर प्रशस्त हैं, हेतु महत्वपूर्ण हैं, श्रेष्ठ हैं।

5.5

यत्साङ्ख्यैः(फ्) प्राप्यते स्थानं(न्), तद्योगैरपि गम्यते।
एकं(म्) साङ्ख्यं(ञ्) च योगं(ञ्) च, यः(फ्) पश्यति स पश्यति॥5.5॥

सांख्ययोगियों के द्वारा जो तत्त्व प्राप्त किया जाता है, कर्मयोगियों के द्वारा भी वही प्राप्त किया जाता है। (अतः) जो मनुष्य सांख्ययोग और कर्मयोग को (फलरूप में) एक देखता है, वही (ठीक) देखता है।

विवेचन- कर्म योगी और साङ्ख्य योगी दोनों को ही एक ही परिणाम प्राप्त होता है, भगवान की प्राप्ति। श्रीभगवान ने सभी श्लोकों में ये ही बात दोहरायी है। भगवान ये बात गहरायी से बताना चाह रहे हैं। अर्जुन चूँकि विषाद से युक्त और भ्रमित हैं अत: श्रीभगवान उन्हें स्पष्ट करना चाह रहे हैं कि जो इन दोनों भगवद् प्राप्ति मार्गों को एक समझता है, वही सही समझता है। नाव से जाय या तैर कर, पहुँचेंगें तो एक ही जगह। तैर कर जाने से थोड़ा परिश्रम अधिक होगा। ठीक वैसे ही साङ्•ख्य योगी को भी तपस्या और ध्यान अधिक करना पड़ेगा। नाव से पार जाना अधिक सहज है, वैसे ही कर्म योग सहज है। दोनों के द्वारा ही भगवान की प्राप्ति हो सकती है।

5.6

सन्न्यासस्तु महाबाहो, दुःखमाप्तुमयोगतः।
योगयुक्तो मुनिर्ब्रह्म, नचिरेणाधिगच्छति॥5.6॥

परन्तु हे महाबाहो ! कर्मयोग के बिना संन्यास सिद्ध होना कठिन है। मननशील कर्मयोगी शीघ्र ही ब्रह्म को प्राप्त हो जाता है।

विवेचन- इस श्लोक में श्रीभगवान महाबाहो सम्बोधन अर्जुन के लिए करते हैं। सर्वप्रथम कर्म योगी बनना आवश्यक है। कर्मयोगी बनने के पश्चात ही साङ्ख्य योगी बनना सम्भव है। कक्षा एक से चार तक की पढ़ाई पूरी करके ही ऊपर की कक्षा में जाना पड़ता है। सही से कर्म योगी नहीं बन पाये तो साङ्ख्य योगी बनना बहुत कठिन है। कर्म योगी को शीघ्र भगवान की प्राप्ति हो जाती है। कर्म योगी सभी कर्मों को श्रीभगवान को समर्पित कर श्रीभगवान को प्राप्त हो जाते हैं।

कर्मयोग में मनुष्य अपने समस्त कर्मों को श्रीभगवान को अर्पित कर देता है, इस प्रकार वह स्वयं के समस्त कर्मबन्धनों से मुक्त हो जाता है। न ही जीव में स्वयं द्वारा किए गए कर्मों हेतु कर्ता का अभिमान ही निहित होता है, न ही किसी कर्म फल की इच्छा। अत: ऐसा पूर्णतः मुक्त जीव स्वतः ही भगवद् भक्ति द्वारा श्रीभगवान को प्राप्त कर लेता है।

5.7

योगयुक्तो विशुद्धात्मा, विजितात्मा जितेन्द्रियः।
सर्वभूतात्मभूतात्मा, कुर्वन्नपि न लिप्यते॥5.7॥

जिसकी इन्द्रियाँ अपने वश में हैं, जिसका अन्तःकरण निर्मल है, जिसका शरीर अपने वश में है (और) सम्पूर्ण प्राणियों की आत्मा ही जिसकी आत्मा है, (ऐसा) कर्मयोगी (कर्म) करते हुए भी लिप्त नहीं होता।

विवेचन- हमारे मन में आकांक्षाएँ नहीं आये, इसके लिए क्या-क्या करना चाहिए, ये इस श्लोक में बता रहे हैं। ये महत्वपूर्ण श्लोक है। इन्द्रियाँ अर्थात आँख, नाक, हाथ, कान और त्वजा हमारे वश में होनी चाहिए। हम पढ़ाई कर रहे हैं, बार-बार खाने की इच्छा होना, खेलने की इच्छा का होना, चलचित्र देखने की इच्छा का होना, पढ़ाई के समय मित्र के बुलाने पर तुरन्त पढ़ाई छोड़ कर खेलने चले जाना, ये सब होने का मतलब है, इन्द्रियों पर हमारा नियन्त्रण नहीं है। जिस समय जिसकी आवश्यकता है, वही करेंगे अर्थात् पूजा के समय पूजा, पढ़ाई के समय पढ़ाई करना चाहिए। मन में जो आये वो ही करेंगे, ये नहीं होना चाहिए। जिस समय जो कार्य करें, उसको एकाग्रता से करना है। जिसका मन निर्मल है, जिसके मन में दूसरे के प्रति बुरे विचार नहीं आते, जैसे कि हमारे कक्षा में हमारे सहपाठी के अच्छे अङ्क प्राप्त होने पर, उसके अच्छी चित्रकारी करने पर, अगर हमारे मन में ये आये कि ऐसा क्या है, इससे अच्छा हम बना सकते हैं, ऐसा सोचने से मन की स्वच्छ नहीं हुआ। कोई अच्छा करे तो उसकी प्रशंसा करनी चाहिए। मैं भी कर सकती हूँ, अरे वो तो अच्छे अङ्क पा कर अभिमान दिखा रही है, ये बुरे विचार नहीं आने चाहिए। जिसका शरीर वश में है, बगीचे में बैठे हुए घास को उखाड़ते रहेंगे, कहीं आरामदायक जगह पर जहाँ बैठे हैं, उस चादर के रेशे उखाड़ते रहते हैं, मुँह से नाखून काटते रहते हैं, ऐसे लोगों का अपने शरीर पर नियन्त्रण नहीं होता। शरीर पर नियन्त्रण होना चाहिए। जो सभी प्राणी मात्र में ईश्वर का दर्शन करता है, सभी को भगवान का अंश मानता है, ऐसा कर्म योगी, कर्म करते हुए भी संलग्न नहीं होता हैं। कर्मयोगी का शरीर मन पर नियन्त्रण होता है, वो सबको भगवान का अंश मानता है एवम् कर्मों से बद्ध भी नहीं होता है।

5.8, 5.9

नैव किञ्चित्करोमीति, युक्तो मन्येत तत्त्ववित्।
पश्यञ्शृण्वन्स्पृशञ्जिघ्रन्, नश्नन्गच्छन्स्वपञ्श्वसन्॥5.8॥
प्रलपन्विसृजन्गृह्णन्, नुन्मिषन्निमिषन्नपि।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेषु, वर्तन्त इति धारयन्॥5.9॥

तत्त्व को जानने वाला सांख्ययोगी (मैं स्वयं) कुछ भी नहीं करता हूँ' - ऐसा माने (अत:) देखता हुआ, सुनता हुआ, छूता हुआ, सूँघता हुआ, खाता हुआ, चलता हुआ, सोता हुआ, श्वास लेता हुआ,

बोलता हुआ, (मल-मूत्र का) त्याग करता हुआ, ग्रहण करता हुआ, आँखें खोलता हुआ (और) मूँदता हुआ भी सम्पूर्ण इन्द्रियाँ इन्द्रियों के विषयों में बरत रही हैं' - ऐसा समझे।

विवेचन- आठवाँ और नौवाँ श्लोक एक साथ में लेते हैं। ये श्लोक गीताजी के कठिन श्लोक माने जाते हैं। इसमें साङ्ख्य योगी की विशेषता बतायी है। कर्म योगी से ऊपर की स्थिति वाला, जिसमें किसी तरह की आसक्ति नहीं होती, सुख दुःख में समत्व वाली स्थिति होती हैं, वो साङ्ख्य योगी कहलाता हैं। साङ्ख्य योगी ये मानता हैं कि वो कुछ भी नहीं करता है। पढ़ाई कर रहें हैं, तो भी मैं नहीं कर रहा हूँ, जो भी है, वो भगवान ही करा रहे हैं। सब कुछ भगवान ही करवा रहे हैं, उससे ऊपर की स्थिति है (जिसका हमें अनुभव नहीं हैं)। जो सुनता हुआ, छूता हुआ, खाता हुआ, सोता हुआ, साँस लेता हुआ, बोलता हुआ, आँखें खोल और बन्द करता हुआ, उनको लगता है ये इन्द्रिय विषय हैं। त्वजा का स्पर्श, आँख देख रही है, समस्त कार्य इन्द्रियों द्वारा सम्पादित हैं। जिसका जो काम है, वो वही कर रहा है अर्थात् इन्द्रियाँ अपना-अपना काम कर रही हैं। उन्हें कोई भी पुरस्कार मिलने पर, कक्षा में प्रथम आने पर भी मेरापन का अभिमान नहीं होता हैं। सत्र में उपस्थित सभी बच्चें कर्मयोगी ही बने रहें। प्रसन्न रहें। घर पर कोई काँच की वस्तु या पात्र टूट जाने पर हम माँ की डाँट के डर से भाग जाते हैं, माँ को बताते हैं कि ये मैंने नहीं किया, किसी और का नाम लगा देते हैं। किसी काम के बिगड़ जाने पर में ये बताते हैं कि मैंने नहीं किया। ठीक वैसे ही अच्छे काम करने पर भी मैंने नहीं किया, ऐसा भाव होना चाहिए, मैं नहीं कर रहा हूँ।

मैं नहीं, मेरा नहीं,
यह तन किसी का है दिया ।
जो भी अपने पास है,
वह धन किसी का है दिया

किसी का अर्थात् भगवान का दिया हुआ है अर्थात् मेरे समीप जो भी कुछ है, उस परमपिता परमेश्वर का ही दिया हुआ है। अत: ऐसे विचार करते हुए जो भी कुछ हमारे साथ है उसका जीव को लेशमात्र भी अभिमान नहीं करना चाहिए।

5.10

ब्रह्मण्याधाय कर्माणि, सङ्गं(न्) त्यक्त्वा करोति यः।
लिप्यते न स पापेन, पद्मपत्रमिवाम्भसा॥5.10॥

जो (भक्तियोगी) सम्पूर्ण कर्मों को परमात्मा में अर्पण करके (और) आसक्ति का त्याग करके (कर्म) करता है, वह जल से कमल के पत्ते की तरह पाप से लिप्त नहीं होता।

विवेचन- कर्म योग पर ज़्यादा चर्चा हुई है। कर्म योगी सम्पूर्ण कर्मों को भगवान को समर्पित कर देता हैं, आसक्ति का त्याग कर देता है, मेरा-मेरा का त्याग कर देता हैं। कमल जैसे कीचड़ में खिलता हैं, किन्तु कीचड़ और जल से लिप्त नहीं होता हैं। वो जल में रहते हुए भी निर्लिप्त रहता हैं। कमल का यह विशेष गुण होने के कारण ही भगवान के अङ्गों को कमल कहा हैं, चरणकमल, कमलनयन आदि आदि। भगवान सभी क्रियाओं में रहते हुए भी लिप्त नहीं होते हैं। नीर में ज लगाने से, जल में ज लगाने से नीरज, जलज बन जाता है। जल और कमल का अभिन्न सम्बन्ध हैं। संसार से निर्लिप्त रहें, ठीक कमल की तरह। मोह माया तो है, सब कुछ है, पर उनमें रमना नहीं चाहिए, इसका पूरा ध्यान रखना चाहिए। भजन भी है।

जो जग में रहूँ तो ऐसे रहूँ,
जैसे जल में कमल का फूल रहे,
मेरे सब गुण दोष समर्पित हों,
करतार तुम्हारे हाथों में ॥

जैसे जल में खिलने वाला कमल का फूल, उससे अलग है, ठीक वैसे ही मोह माया से निर्लिप्त रहना चाहिए।

हरि नाम संकीर्तन से सत्र का समापन हुआ। इसके। प्रश्नोत्तर हुए

<u>विचार-मन्थन</u>

प्रश्नकर्ता- संवेद भैया
प्रश्न- ज्ञान एवम् कर्म योग में क्या अन्तर है?

उत्तर- ज्ञानयोग- जो वेदों का अध्ययन करते हैं। उनके लिए मूर्ति पूजा का कोई महत्व नहीं होता। वे वेदों के अध्ययन द्वारा सर्वप्रथम ईश्वर को समझने का प्रयास करते हैं तत्पश्चात् वे निःसन्देह परमपिता परमात्मा को प्राप्त कर लेते हैं। ज्ञानयोग ही साङ्ख्य योग है।

- **कर्मयोग-** इस योग के माध्यम से जीव अपने कर्म एवम् उसके कर्मफलों का त्याग कर अर्थात् उन्हें श्रीभगवान को अर्पित कर देते हैं। वे श्रीभगवान के सगुण रूप की उपासना करते हैं। वे श्रीराम एवम् श्रीकृष्ण के मूर्ति रूप पर, उनके उपासक अपने समस्त कर्मों को अर्पित कर देते हैं।

<u>इस प्रकार ज्ञान योगी वेदों के अध्ययन व श्रीभगवान की आराधना करते हुए, श्रीभगवान को प्राप्त करते हैं।</u>

तथा कर्मयोगी अपने कर्मों के श्रीभगवान को अर्पण कर श्रीभगवान को प्राप्त करते हैं

प्रश्नकर्ता- प्रथम भैया

प्रश्न- भोजन से पूर्व कौन सा श्लोक उच्चारित किया जाना चाहिए?

उत्तर- यदि हम श्रीमद्भगवद्गीता जी के श्लोकों के सन्दर्भ बात करें तब अध्याय चतुर्थ के चौबीसवें श्लोक का उच्चारण भोजन पूर्व किया जाना महत्वपूर्ण माना जाता है-

<u>ब्रह्मार्पणं(म्) ब्रह्म हविः(र्), ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम्।</u>

<u>ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं(म्), ब्रह्मकर्मसमाधिना॥</u>

अर्थ- जो मनुष्य पूर्णतया भगवद् भक्ति में तल्लीन रहते हैं उनका हवन ब्रह्म है, हवन सामग्री ब्रह्म है और करछुल जिससे आहुति डाली जाती है वह ब्रह्म है, अर्पण कार्य ब्रह्म है और यज्ञ की अग्नि भी ब्रह्म है। ऐसे मनुष्य जो प्रत्येक वस्तु को भगवान के रूप में देखते हैं वे सहजता से उसे पा लेते हैं।

इसके अतिरिक्त यदि आपके निकट पर्याप्त समय है तब आप श्रीमद्भगवद्गीता जी के सम्पूर्ण पन्द्रहवें अध्याय का भी पठन कर सकते हैं।

प्रश्नकर्ता- सानवी दीदी
प्रश्न- ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु का क्या अर्थ है?
उत्तर- जिस प्रकार हम कोई कार्ड अर्थात् जन्मदिन की शुभकामनाओं वाले पत्र बना अपने माता-पिता, अपने दादी-दादा को देते हैं। तब हमारे द्वारा किया गया कार्य अर्थात् बनाया गया कार्ड उन्हें अर्पित कर दिया जाता है, ठीक उसी प्रकार जब हम

अपने द्वारा किए गए समस्त कार्यों को श्रीभगवान के चरणों में अर्पित कर देते हैं तथापि हम उन समस्त कर्म बन्धनों से मुक्त हो जाते हैं साथ ही कर्ता के अभिमान सहित जीव कर्मफल की इच्छा से भी विरक्त हो जाते हैं।

यहाँ ॐ अक्षर परमात्मा को सम्बोधित करने हेतु प्रयुक्त किया जाता है अर्थात् ॐ अक्षर श्रीभगवान का ही प्रतीक रूप है।

।।ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु।।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!

हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !

संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!

Let's come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends & acquaintances

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||

||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||